क्रिया से बंधन नहीं, भाव से बंधन

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

द्रव्य पक्ष क्रिया है। जो हम करते हैं वह क्रिया है। कर्म करने में भाव का मुख्य आधार होता है। कठपुतली नाचती है किन्तु उसे नचाने वाला कोई दूसरा होता है। जैसा वह संकेत करता है वैसा ही कठपुतली नाचती है। क्रिया कोई दूसरा कर रहा है और कराने वाला कोई दूसरा है। जब क्रिया करवाई जाती है तो करने वाला परतंत्र हो जाता है। वह अपनी इच्छानुसार कार्य नहीं कर पाता। इस संसार में मन, वचन और काया से न तो किसी को दुख देना चाहिए, न तो अनुमोदन करना चाहिए। इस संसार में दुख कोई प्राप्त नहीं करना चाहता, लेकिन दुख सबको प्राप्त हो जाता है। सभी अपने–अपने कर्म के अनुसार सुख–दुख प्राप्त करते हैं। जो जैसा बोता है वह वैसा प्राप्त करता है।

राग–द्वेष रूप कर्म बीज बंधन का कारण है। द्रव्य या क्रिया से बंधन नहीं होता। संन्यासी मन, वचन और काया से हिंसा का त्याग कर देता है। किन्तु हलन–चलन में यदि किसी भी प्राणी की हिंसा हो जाती है तो उसे बंधन नहीं होता। कोई सामान्य जीवात्मा राग–द्वेष मुक्त है, यदि उससे किसी प्राणी की हिंसा हो जाती है तो द्रव्य हिंसा और भाव हिंसा हो जाती है। संन्यासी और सामान्य व्यक्ति में अन्तर यह है कि संन्यासी ने मन, वचन और काया से हिंसा के त्याग का व्रत धारण किया है। सामान्य व्यक्ति राग–द्वेष युक्त है उसकी क्रिया भावजन्य है। उसके द्वारा की गई हिंसा बंधन का कारण है। कर्म बंधन का कारण राग–द्वेष्ज्ञ है। राग–द्वेष भाव में रहता है। भाव को सुधारने से भव सुधर जाता है। एक छोटी सी चिनगारी पूरे जंगल को जलाकर राख कर देती है। राग–द्वेष की चिनगारी जब तक है तब तक मुक्ति सम्भव नहीं। अतः इसे नष्ट करना आवश्यक है।

इस संसार में जो अनासक्त भाव से रहता है वह जल में कमल की भांति संसार से निर्लिप्त रहता है। उसको बंधन नहीं होता। अनासक्त भाव का अर्थ है– किसी भी वस्तु के प्रति आसक्ति का ना होना। वस्तु परिग्रह नहीं है वस्तु के प्रति आसक्ति का होना परिग्रह है। यह

मेरा है, यह तुम्हारा है, यह आसक्ति है। मैं और मेरेपन की भावना आसक्ति का कारण है। यह शरीर नाशवान है, यह संसार नाशवान है। यह चिन्तन अनासक्त भाव है। अनासक्त भाव से मोक्ष की प्राप्ति होती है। कमल का पौधा किचड़ से उत्पन्न होता हैं किन्तु किचड़ का प्रभाव उस पर नहीं होता। वह किचड़ से निर्लिप्त रहता है। जो मनुष्य संसार में रहते हुए संसार में निर्लिप्त रहता है वह मोक्षगामी होता है। महाराज जनक विदेहराज कहलाते थे। सांसारिक वस्तुओं का उन पर कोई प्रभाव नहीं था। इसीलिए उनको विदेहराज कहा जाता था। इसी प्रकार जो व्यक्ति मोक्ष की इच्छा करता है। उसमें सांसारिक वस्तुओं के प्रति मोह नहीं होना चाहिए।

आत्मा और शरीर का पार्थक्य देखना चाहिए। इसीसे अनासक्त भाव जागृत होता है। किसी के प्रति राग–द्वेष न रखना अनासक्त है। कर्त्तव्य भावना से कार्य करना चाहिए। आजकल व्यक्ति स्वार्थी हो गया है। स्वार्थ के कारण दृष्टि नकारात्मक हो गयी है। इससे समाज और राष्ट्र में बिखराव आ रहा है। मैं और मेरापन अहंकार को जन्म देता है। अहंकार से मनुष्य अपने को नहीं जान सकता। कबीरदासजी ने लिखा है– जब मैं था तब हरि नहीं अब हरि है मैं नाहि। अर्थात् जब अहंकार रहता है तो ईश्वर का दर्शन नहीं होता। जब ईश्वर से साक्षात्कार होता है तो अहंकार नष्ट हो जाता है।

अहंकार से व्यक्ति का मानसतन्त्र बिगड़ गया है। आज का मनुष्य धन प्राप्त करने की होड़ में इतना निमग्न हो गया है कि उसे कुछ दिखायी ही नहीं देता। वह धन को साध्य मान लिया है। जबकि धन साधन है साध्य नहीं। अनासक्त व्यक्ति का कोई शत्रु नहीं होगा। सभी प्राणियों के प्रति उसमें समता भाव रहता है। अनासक्त भाव से सुख की प्राप्ति होती है। मुक्ति को प्राप्त करने का यह उत्तम साधन है। इससे मानसिक शान्ति मिलती है। सुख और दुःख में सम रहना अनासक्ति भाव है। धन के प्रति लालसा का त्याग होना चाहिए। लोगों के मस्तिष्क में परिवर्तन होना चाहिए। शोषण रहित समाज तभी बन सकता है, जब व्यक्ति अनासक्त भाव से जीवनयापन करें।

शरीर से भी आसक्त नहीं होना चाहिए। गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने कहा है कि जैसे मनुष्य पुराने वस्त्र को त्यागकर नये वस्त्र को धारण करता है, वैसे आत्मा पुराने शरीर को त्यागकर

नये शरीर को धारण करता है। परिवर्तन सृष्टि का नियम है। अनासक्त की भावना एक सुन्दर गुण है। दार्शनिक दृष्टि से यदि हम चिंतन करें तो बंधन और मुक्ति जीव के लिए है। जिनसे कर्म बंधे या कर्मों का बंधना बन्ध है। मिथ्यादर्शनादि द्वारों से आए हुए कर्म पुद्गलों का आत्मप्रदेशों में एक क्षेत्रावगाह हो जाना बन्ध है। अनेक प्रकार के शरीर और मानस दुःखों से दुःखी होता है। राग–द्वेषादि के निमित्त से जीव के साथ पौद्गलिक कर्मों का बन्ध निरन्तर होता है। जीव के भावों की विचित्रता के अनुसार वे कर्म भी विभिन्न प्रकार की फलदान शक्ति को लेकर आते हैं, इसी से वे विभिन्न स्वभाव या प्रकृति वाले होते हैं। जो व्यक्ति जितना संग्रह करता है वह संग्रह के जाल में उतना ही फंसता जाता है। इसलिए मोक्षकामी पुरुष को बाह्य वस्तुओं में अनासक्त भाव नहीं रखना चाहिए।